संपादकीय जागरण

सोमवार, 10 सितंबर, 2018 : भाद्रपद शुक्ल 1 वि. 2075

अहंकारपूर्ण जीवन को छोड़ देना ही त्याग है

अतार्किक आयोजन

पेट्रोल और डीजल के बढ़ते मूल्य एक बार फिर राजनीतिक मसला बन गए हैं तो यह स्वाभाविक ही है। चूंकि पेट्रोल और डीजल के दाम लगातार बढ़ते जा रहे हैं और केंद्र सरकार कोई कदम उठाती नहीं दिख रही इसलिए विपक्ष का हमलावर होना समझ आता है, लेकिन अच्छा हो कि विपक्षी दल और खासकर कांग्रेस यह स्पष्ट करे कि इस पर भारत बंद बुलाने से उसे या फिर आम जनता को क्या हासिल होने वाला है? आखिर ऐसा भी नहीं कि लोगों को इसकी जानकारी न हो कि पेट्रोल एवं डीजल के मूल्य किस तरह बढ़ते ही चले जा रहे हैं। भारत बंद बुलाने के लिए ऐसे आरोप उछालना सस्ती राजनीति के अलावा और कुछ नहीं कि सरकार लोगों को लूटने में लगी हुई है। क्या जब संप्रग सरकार के समय एक बार पेट्रोल के दाम 70 रुपये प्रति लीटर से अधिक हो गए थे तब ऐसा ही किया जा रहा था? भारत बंद के लिए तैयार कांग्रेस और अन्य दल इस पर प्रकाश डाल सकें तो बेहतर कि सरकार को आम जनता को राहत देने के लिए क्या कदम उठाने चाहिए? यदि विपक्षी दल यह चाह रहे हैं कि केंद्र सरकार पेट्रोलियम पदार्थों पर लगाए जाने वाले करों में कमी करे तो फिर राज्य सरकारों को भी इसमें भागीदार बनना होगा। क्या वे इसके लिए तैयार हैं? यदि हां तो फिर क्या कारण है कि अभी तक विपक्ष शासित किसी भी राज्य और यहां तक कि कर्नाटक अथवा पंजाब ने पेट्रोल और डीजल पर वैट की दरें घटाने का काम नहीं किया है? आखिर वे पेट्रोल और डीजल पर वैट की दरें घटाकर जनता को राहत देने के साथ ही केंद्र सरकार के समक्ष कोई नजीर पेश क्यों नहीं कर रहे हैं?

एक और भारत बंद का चाहे जो असर हो, मोदी सरकार यह कहकर कर्तव्य की इतिश्री नहीं कर सकती कि पेट्रोलियम पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि अंतरराष्ट्रीय कारणों से हो रही है। यह सही है कि कच्चे तेल के मूल्यों में वृद्धि ईरान, वेनेजुएला और तुर्की के संकटग्रस्त होने के कारण हो रही है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि भारत सरकार पेट्रोल एवं डीजल के मूल्य बढ़ते हुए देखती रहे। उसे यह आभास होना चाहिए कि महंगा पेट्रोल और डीजल आम जनता को परेशानी में डालने के साथ ही महंगाई के सिर उठाने का जरिया बन रहा है। सरकार की ओर से किसी समस्या के कारणों को रेखांकित करना भर पर्याप्त नहीं और ऐसे बयानों का तो कोई मतलब ही नहीं कि भारत जैसा बड़ा देश बिना सोचे-समझे एक झटके में कोई कदम नहीं उठा सकता। अगर सरकार पेट्रोल और डीजल की खपत कम करने के उपाय कर रही है तो यह अच्छी बात है, लेकिन उसे यह पता होना चाहिए कि ऐसे उपाय रातों-रात अमल में नहीं लाए जा सकते। माना कि डॉलर के मुकाबले रुपये की गिरती कीमत ने सरकार के विकल्प सीमित कर दिए हैं, लेकिन वह इसकी अनदेखी नहीं कर सकती कि अगर पेट्रोल और डीजल के दामों में वृद्धि का सिलसिला थमा नहीं तो महंगाई बेलगाम हो सकती है और चुनावी माहौल में यह उसके लिए कहीं बड़ा संकट होगा।

डैमेज कंट्रोल की चुनौती

परिषदीय प्राथमिक स्कूलों में 68,500 शिक्षकों की भर्ती में अनियमितताएं सामने आई हैं। सरकार ने परीक्षा नियामक सचिव को निलंबित करने व अन्य पर कार्रवाई की है। मामले की जांच के लिए समिति का भी गठन कर दिया गया है जो एक हफ्ते में रिपोर्ट देगी। अब सारी तैयारी नए सिरे से करनी होगी। हो सकता है कि इस भर्ती की अगली परीक्षा के लिए नए सिरे से आवेदन न मंगाए जाएं लेकिन, इस पूरी प्रक्रिया में जो सरकारी धन खर्च हुआ है, उसकी भरपायी कौन करेगा यह एक बड़ा सवाल है। अनियमितता उजागर हुई है तो कुछ ऐसे लोग जरूर होंगे जिन्हें इसका लाभ अवश्य मिला होगा, क्या उनसे यह क्षतिपूर्ति होगी या फिर कड़ी सजा देने के एलान के नाम पर महज कागजी खानापूरी से ही काम चल जाएगा। यह केवल एक अनियमितता का मामला नहीं है। क्योंकि किसी भी भर्ती में सेंध लगाने का प्रयास जरूर होता है। सवाल तो यही है कि आखिर फूलप्रूफ तैयारी के नाम पर क्या किया गया या परीक्षा नियामक अभी तक तकनीकी तौर पर इतने सक्षम क्यों नहीं हो सके हैं कि गड़बड़ी करने का मौका ही न मिले।

सरकार को सख्त कदम उठाने होंगे, ताकि अगली अन्य भर्तियों में गड़बड़ी करने का मंसूबा पाले बैठे लोगों का हौसला पस्त हो

तय है कि योगी सरकार ऐसा कोई भी जोखिम नहीं उठाना चाहेगी, जिससे उसकी साख पर बट्टा लगे। अब देखना यही है कि कितनी जल्दी सरकार इस परीक्षा में गड़बड़ी के दोषियों को सजा दिला पाती है या जल्द से जल्द परीक्षा संचालित करवा कर युवाओं के आक्रोश पर काबू पाएगी। जो भी हो, पर सरकार को सख्त कदम उठाने होंगे, ताकि अगली अन्य भर्तियों में गड़बड़ी करने का मंसूबा पाले बैठे लोगों का न केवल हौसला पस्त हो, बल्कि भर्तियां भी पारदर्शी और त्वरित गति से हो। सरकार तभी वास्तव में डैमेज कंट्रोल कर सकेगी।

कह के रहेंगे

माधव जोशी

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या आपको लगता है कि देश में इलेक्ट्रिक वाहनों को बढ़ावा देने के लिए पर्याप्त ढांचा मौजूद है?

आज का सवाल

क्या पेट्रोल-डीजल की बढ़ती कीमत आगामी चुनावों में भाजपा के लिए परेशानी का सबब बन सकती है?

अपनी राय और अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए अपने मोबाइल के मैसेज बॉक्स में जाकर POLL लिखें, स्पेस देकर Y, N या C लिखकर 57272 पर भेजें
Y -हां, N-नहीं, C-कह नहीं सकते

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।
सभी आंकड़े प्रतिशत में।

चिंतित करता समाज का हिंसक चरित्र

हृदयनारायण दीक्षित

भीड़ का उन्माद हमारे राष्ट्र का मूल स्वभाव नहीं है। भीड़ द्वारा बढ़ती हिंसा सभ्य समाज पर कलंक है। इससे बचने-बचाने के लिए वाणी पर संयम भी जरूरी है

उन्माद प्रायः व्यक्तिगत नहीं होता। होता भी है तो भीतर छिपा रहता है। यह भीड़ पाकर उत्तेजित होता है। अराजक और हिंसक भी हो जाता है। आंदोलनों की भीड़ निर्जीव बसें फूंकती हैं। अकेला मनुष्य ऐसी निरर्थक मूर्खता नहीं कर सकता। सामान्य चोरी में पकड़े गए व्यक्ति को भीड़ पीट देती है। सुशिक्षित भी भीड़ में ऐसे अवसर पर दो चार थप्पड़ मार लेते हैं। बच्चों की चोरी की घटनाओं में भीड़ संदिग्ध को मारती ही रहती है। गो तस्करी के मामलों में भीड़ के ऐसे ही आचरण देखे गए हैं। भीड़ भीड़ होती है। उसके आचरण का कोई नियम नहीं होता। भीड़ के उन्माद बढ़ने का पूर्वानुमान मुश्किल है। सामान्य भीड़ भी किसी समय हिंसक हो सकती है। भारतीय समाज का यह चरित्र चिंताजनक है, लेकिन यहां का समाज अपने मूल स्वरूप में अराजक व हिंसक नहीं है। ऐसा होता तो गजनी का महमूद सोमनाथ न लूट पाता। पिछले ढाई-तीन दशक से ऐसा उन्माद ज्यादा बढ़ा है। इंदिरा गांधी की हत्या के बाद भीड़ ने राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में भी बड़ी हिंसा की थी। पिछले दशक में तमाम आंदोलनों तथा अन्य अवसरों पर भीड़ हिंसक हुई है। केंद्र सरकार ने इसे गंभीरता से लिया है। सुप्रीम कोर्ट ने भी भीड़ की हिंसा पर नाराजगी प्रकट की है।

भीड़ की हिंसा पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पहले ही नाराजगी व्यक्त की थी। सरकार ने लोकसभा में बताया था कि भीड़ की हिंसा पर समग्र विचार करने के लिए गृहमंत्री राजनाथ सिंह के नेतृत्व में एक मंत्रिसमूह गठित किया है। इस समूह में विदेश मंत्री सुषमा स्वराज, सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री नितिन गडकरी, विधि मंत्री रविशंकर प्रसाद और सामाजिक न्याय व अधिकारिता मंत्री थावरचंद्र गहलोत शामिल हैं। इसके अलावा केंद्रीय गृहसचिव के नेतृत्व में भी एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया गया था। गृहमंत्री राजनाथ सिंह ने अविश्वास प्रस्ताव पर बोलते हुए इंदिरा गांधी की हत्या के बाद 1984 में हुई भयानक हिंसा को सबसे बड़ी 'मॉब लिंचिंग' कहा था। उन्होंने उचित ही कहा कि संविधान में लोकव्यवस्था व पुलिस राज्य विषय हैं। राज्यों को इन विषयों पर विधि निर्माण व विधि प्रवर्तन के पूरे अधिकार हैं। उन्होंने भीड़ हिंसा रोकने के लिए समय-समय पर राज्यों को परामर्श भी जारी किए हैं। उत्तर प्रदेश सहित अनेक राज्यों ने सुप्रीम कोर्ट और केंद्र की अपेक्षानुसार कार्रवाई भी की है। राजनाथ सिंह के नेतृत्व वाला मंत्रिसमूह सम्यक विचारोपरांत प्रधानमंत्री को अपनी रिपोर्ट देगा। ऐसी त्वरित सक्रियता के बावजूद इस मुद्दे का राजनीतिक दुरुपयोग दुर्भाग्यपूर्ण है।

सुप्रीम कोर्ट की चिंता सही है। केंद्र की सक्रियता सही है। भारतीय दंड विधान में समूह द्वारा किए गए अपराधों के लिए बहुत पहले से कानून हैं। दंड प्रक्रिया संहिता के कारण पुलिस भी तमाम विधिक उपायों से समृद्ध है। मूल समस्या कानून के क्रियान्वयन की है। दुष्कर्म के कानून लगातार कड़े हुए हैं। कड़ाई मृत्युदंड और आजीवन कारावास तक पहुंच गई है। तो भी अबोध बच्चियों के विरुद्ध घटनाएं घट रही हैं। 'मॉब लिंचिंग' पर भी कड़ा कानून बन सकता है। माना जाता है कि कड़े दंड के भय से अपराधी अपराध नहीं करते, लेकिन यह अर्द्धसत्य है। सभ्य और सांस्कृतिक समाज स्वयं ही अपराधों से दूर रहते हैं। पुलिस का काम आपराधिक घटना के बाद शुरू होता है। पुलिस दुष्कर्म, हत्या या भीड़ द्वारा हिंसा का पूर्वानुमान नहीं कर सकती। राजव्यवस्था की सीमा है। अपराधी को दंड दिलाना उसका कर्तव्य है। इस काम में किसी भी तरह की ढिलाई अक्षम्य है। हमें प्रकृति में विद्यमान नियम व अनुशासन देखने चाहिए। व्यक्ति को शील, आचार-व्यवहार व नियम-अनुशासन देना समाज का कर्तव्य है। हिंसा भारतीय प्रकृति नहीं है।

प्रकृति नियमबद्ध है। एक लयबद्ध संगीत है। सूर्य नियमबद्ध है। चंद्र का घटना-बढ़ना, पूर्णिमा और अमावस होना भी नियमबद्ध है। पृथ्वी नियमबंधन में गतिशील है। जल ऊंचे से नीचे प्रवाहमान है। प्रकृति अराजक नहीं है। ऋग्वैदिक पूर्वजों ने प्रकृति की प्रत्येक गतिविधि को सुसंगत नियम आबद्ध बताया है। प्रकृति का अपना आंतरिक संविधान है। उन्होंने इस संविधान का नाम रखा था ऋत। अग्नि प्रकृति की महत्वपूर्ण शक्ति है। अग्नि ऋतस् कवि या ज्ञानी बताए गए हैं। ऋग्वेद में अनेक देवताओं के उल्लेख हैं, वे भी ऋत नियमों में हैं। वरुण देव 'ऋतस्य गोपा' यानी प्राकृतिक संविधान के विशेषज्ञ हैं। पृथ्वी भी 'ऋतस्य' है। डॉ. राधाकृष्णन ने बताया है कि ईश्वर भी इस विधान में परिवर्तन नहीं कर सकता। मनुष्य इसी प्रकृति का भाग है। उसे भी विधि मर्यादा में रहना चाहिए, लेकिन मनुष्य प्राकृतिक विरासत के बावजूद मर्यादित नहीं है। यूनानी दर्शन में मनुष्य को सामाजिक प्राणी कहा गया है। दुनिया का प्राचीनकाल शालीन था। मध्यकाल में बर्बरता आई। भारतीय इतिहास के उत्तर वैदिक काल तक सामूहिक प्रीति थी। सामाजिक नियमबंधन थे। फिर अराजकता जैसी स्थिति की शुरुआत हुई। तब भद्रजनों ने सांस्कृतिक व्यवस्था गढ़ी। समाज और राज का सुसंगत विकास हुआ।

भारत के प्राचीन इतिहास में भीड़ द्वारा हिंसा के उदाहरण नहीं हैं। गुप्त काल के शासन में मृत्युदंड नहीं था। फाह्यान ने लिखा है, चोरी-डकैती नहीं थी। कानून उदार थे। शासन लोकप्रिय था। मध्यकाल में पड़ोसी देशों में अपराधी को सार्वजनिक रूप से पत्थर मारे जाते थे। भारत विभाजन के ठीक पहले बंगाल में भीड़ की हिंसा से हजारों हिंदू मारे गए थे। यूरोप में डायन होने के आरोप में हजारों महिलाएं सार्वजनिक रूप से जलाई गई थीं। बाइबिल (ओल्ड टेस्टामेंट, निर्गमन 22.18) में लिखा है, 'तू डायन को जीवित न रहने देना।' कोमो नगर में 1485 में 40 और 1514 में 300 महिलाएं जलाई गईं। ये सारे कृत्य उन्मादी भीड़ ने किए थे। भारतीय समाज में परस्पर आदर की प्राचीन परंपरा रही है। अथर्ववेद में 'विभिन्न पंथों और भाषाओं के आदर का उल्लेख है। समाज में एक-दूसरे की भावनाओं का सम्मान जरूरी है।

समाज व्यवस्था के विकास के कई सिद्धांत हैं। हाब्स का सामाजिक अनुबंध का सिद्धांत प्रतिष्ठित माना जाता है। हाब्स के अनुसार सामान्य व्यवस्था भंग हुई। अराजकता फैली। व्यथित लोग एकत्रित हुए होंगे। उन्होंने परस्पर अनुबंध किया, 'मैं अपने ऊपर नियम लगाने के अधिकार एक मनुष्य अथवा मनुष्यों की सभा का सौंपता हूं, यदि आप सब भी इसी तरह अपने अधिकार इसी मनुष्य/मनुष्यों की सभा को सौंप दो।' हाब्स के अनुसार इस अनुबंध से समाज बना। समाज का हरेक सदस्य समाज से बहुत कुछ पाता है। शर्त यह है कि वह समाज के अनुशासन में रहता है। भारतीय समाज स्वअनुशासित नहीं है। हम परंपरा को पिछड़ापन बताते हैं और संस्कृति विहीनता को प्रगतिशीलता। संप्रति गाय बहस का मुद्दा है। भारत के करोड़ों लोग गाय का आदर करते हैं। इसे मूर्खता कहा जा सकता है, लेकिन ललकारते हुए बीफ पार्टी देने की घटनाएं क्या उन्माद नहीं बढ़ातीं? बच्चे सबको प्रिय हैं। बच्चा चोर पकड़े जाने पर अतिरिक्त सतर्कता की जरूरत क्यों नहीं है? भीड़ द्वारा हिंसा सभ्य समाज पर कलंक है। इससे बचने बचाने के लिए वाणी पर संयम भी जरूरी है। भीड़ का उन्माद राष्ट्र का मूल स्वभाव नहीं।

(लेखक उत्तर प्रदेश विधानसभा के अध्यक्ष हैं)

response@jagran.com

राजनीति का शिकार एससी-एसटी एक्ट

शंकर शरण

हिंसा-अपमान झेलने वालों में सभी जातियों के लोग हैं। सिर्फ अनुसूचित जातियों की चिंता एक नया क्षोभ पैदा कर रही है

इन दिनों अनुसूचित जाति-जनजाति संबंधित (अत्याचार निरोधक) कानून को सुप्रीम कोर्ट द्वारा सुधारने, फिर उसे संसद द्वारा संशोधित कर यथावत कर देने और नए संशोधित कानून को पुनः सुप्रीम कोर्ट में चुनौती देने का मसला गरम है। बहस हो रही है कि क्या कोर्ट द्वारा उस कानून के अंतर्गत गैर-जमानती गिरफ्तारी वाला प्रावधान सुधारना अनुसूचित जातियों के विरुद्ध है? क्या कुछ जातियों के नाम पर अन्य नागरिकों के अधिकारों को नीचा कर देना उचित है? किसी ने जानने की कोशिश नहीं की कि आम लोग इस पर क्या कहते हैं? कुछ नेताओं ने कोर्ट निर्णय को झटपट पलटना तय कर लिया। उन्होंने इससे होने वाले सामाजिक उद्वेलन की परवाह नहीं की।

इस प्रसंग में दक्षिण भारतीय शोधकर्ता डॉ. सूफिया पठान का हाल में प्रकाशित एक शोध-पत्र रोचक है। उन्होंने कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं पर ध्यान दिलाया है। सबसे पहले तो यह दावा कि यहां दूसरों की तुलना में अनुसूचित जातियों के लोग अत्याचार के अधिक शिकार होते हैं। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) अनुसूचित जाति संबंधी अत्याचार निरोधक कानून तथा नागरिक अधिकार रक्षा कानून के अंतर्गत देश भर में होने वाले अपराधों का भी सालाना आंकड़ा जारी करता है। केवल वही मामले कानूनी परिभाषा से 'अत्याचार' में गिने जा सकते हैं, लेकिन उन आंकड़ों को कुछ लोग संपूर्ण नहीं मानते और संख्या बहुत बड़ी बताते हैं, पर ऐसे दावे का आधार क्या है? एनसीआरबी द्वारा 1995 से ही उन अपराधों की अलग सूची रखी जाती है जो समाज के 'कमजोर तबकों' के विरुद्ध होते हैं। इनमें बुजुर्ग, बच्चे, स्त्रियां तथा अनुसूचित जाति-जनजाति के लोग आते हैं। इनके द्वारा झेले गए अपराधों की सूची एनसीआरबी द्वारा अलग से जारी की जाती है, लेकिन अनुसूचित जाति के लोगों द्वारा झेले गए सभी अपराधों को उन पर 'अत्याचार' बता देने का चलन हो गया है। यह गलती मीडिया ही नहीं, विविध सरकारी मंत्रालय, संस्थाएं आदि भी करती हैं। इसमें दो बड़ी गड़बड़ी है। पहली, इसमें वे अपराध भी गिन लिए जाते हैं, जिसमें अपराधी और पीड़ित, दोनों अनुसूचित जाति के ही हैं। जैसे आपसी झगड़े आदि के मामले। दूसरी, उनमें ऐसे अपराध भी हैं जिनमें अपराधी और उनके पीड़ित जानते भी नहीं कि किसकी क्या जाति है। अर्थात जिन अपराधों में जाति कोई कारण नहीं है। लेकिन अनुसूचित जाति के लोगों के विरुद्ध हुए अपराधों की सूची अलग उपलब्ध होने के कारण सभी घटनाओं को 'अत्याचार' से ही जोड़ दिया जाता है, जबकि अत्याचार निरोधक कानून के अंतर्गत हुए अपराधों की संख्या बहुत कम है।

उदाहरण के लिए वर्ष 2016 में अनुसूचित जाति के विरुद्ध हुए कुल अपराधों की संख्या 40,801 थी। इनमें से उस अत्याचार निरोधक कानून के अंतर्गत आने वाले अपराधों की संख्या 5,926 थी, जबकि भारत में हुए तमाम अपराधों की कुल संख्या 48,31,515 थी। चूंकि देश में अनुसूचित जाति की जनसंख्या 17 प्रतिशत है, इसलिए तथ्यतः उस वर्ष इस 17 प्रतिशत आबादी ने तमाम अपराधों का 1 प्रतिशत भी नहीं झेला, जबकि शेष 83 प्रतिशत आबादी 99 प्रतिशत अपराधों का शिकार हुई। इस प्रकार अनुसूचित जातियों की तुलना में गैर-अनुसूचित जातियों के लोग कई गुना अधिक अपराध के शिकार हुए! अन्य वर्षों के आंकड़ों में भी संभवतः कोई भारी अंतर नहीं है। ये आधिकारिक आंकड़े हैं और इनके अलावा कोई अन्य आंकड़े नहीं हैं, पर किसी को इससे मतलब भी नहीं। बस एक बनी-बनाई मान्यता चल रही है। जिन एजेंसियों, एक्टिविस्टों को दुर्बलों की सच्ची चिंता होनी चाहिए थी, वे केवल प्रचार में लगे रहते हैं। यदि चिंता सच्ची होती तो जातियों के वास्तविक इतिहास और वर्तमान की पूरी जानकारी ली जाती जो सामाजिक सद्भाव बढ़ाने के काम आती, पर लगता है वह इरादा ही नहीं है। ध्यान रहे वह कानून बनाने का कारण यह नहीं था कि अनुसूचित जातियों के विरुद्ध अधिक अत्याचार होते थे, बल्कि उन अत्याचारों को विशेष घृणित मानकर विशेष कानून बना था, पर आज मानो उद्देश्य बदल गया है। घटते मामलों को भी बढ़ा-चढ़ाकर दिखाने की प्रवृत्ति हो गई है।

आंकड़े साफ दिखाते हैं कि हिंसा-अपमान झेलने वालों में सभी जातियों के लोग हैं। इसे लोग अनुभव से बखूबी जानते हैं। अतः केवल अनुसूचित जातियों की अनुपातहीन चिंता एक नया क्षोभ पैदा कर रही है जो पहले नहीं थी। दावा किया जाता है कि देश भर में निचली जाति के लोग अधिक हिंसा के शिकार हैं, पर इसकी परख के लिए किसी ने सामान्य गणित का भी प्रयोग नहीं किया। सच तो यह है कि धनी लोगों के सिवा कोई वर्ग नहीं जिसे अन्याय, अपमान, दुर्व्यवहार न झेलना पड़ता हो। यह किसी की चिंता नहीं! पर दुनिया भर में भारत की छवि 'दलितों पर जुल्म' वाले देश के रूप में जरूर बना दी गई। यह अपने ही हाथों अपने मुंह पर कालिख पोतने जैसा है। कुछ नेता, एक्टिविस्ट, एनजीओ आदि इससे अपनी रोटी सेंकते हैं। रोहित वेमुला जैसी किसी भी घटना को खूब प्रचारित कर उसे घृणित, व्यापक बताते हैं, किंतु व्यवस्थित जिले-वार, राज्य-वार परीक्षण की जरूरत नहीं महसूस करते। इसीलिए सुप्रीम कोर्ट द्वारा उस कानून में कुछ सुधार पर फौरन नया संशोधन ले आने से हुई सामाजिक प्रतिक्रिया पर गंभीरता से सोचना चाहिए। यह पहले से टूटे हिंदू समाज को और तोड़ने जैसा है। जिस तरह यहां विविध सरकारें अनुसूचित जातियों के नाम पर नई-नई नीतियां बनाती गईं, उससे दूसरों में एक अनुसूचित-जाति विरोधी भाव पैदा हुआ है-जो पहले नहीं था। गुजरात में पाटीदार, महाराष्ट्र में मराठा या उत्तर प्रदेश में ब्राह्मणों का असंतोष इसी के उदाहरण हैं। विडंबना है कि अनुसूचित जाति संबंधित अत्याचार निरोधक कानून उन्हें संगठित करने को नहीं बना था, पर अब वह उनके विरुद्ध सामूहिक क्षोभ पनपने का कारण बन रहा है। इसके दोषी अनुसूचित जातियों के लोग नहीं, बल्कि हमारे नेता हैं जो सामाजिक हित के बदले केवल निजी, दलीय स्वार्थ देखते रहे हैं। दबी जातियों की स्थिति अब तक स्वतंत्र भारत में निःसंदेह बहुत अच्छी हो चुकी है।

डॉ. भीमराव आंबेडकर और बाबू जगजीवन राम, दोनों ने यहां सभी जातियों को शीघ्र समान नियम, अवसर के अंतर्गत लाने का लक्ष्य रखा था। किसी को स्थाई रूप से विशेष सुविधाओं वाले अलग परकोटे में रखना देर-सबेर दूसरों में क्षोभ पैदा करेगा ही। कुछ नेताओं द्वारा सुप्रीम कोर्ट के निर्णय को जबरन उलटने की क्रिया उसी को तेज कर रही है। यह सामाजिक हित में नहीं है।

(लेखक स्तंभकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

आकांक्षा

दुख को जीवन का शाश्वत सत्य बताया गया है। सवाल यह है कि दुख का निवारण कैसे हो? इसकी खोज में अनंत काल से मनीषियों ने अपना जीवन अर्पित किया और पाया कि दुख का कारण है और इसका निवारण भी है। दुख के कई कारण हैं। सबसे बड़ा कारण है चाह, इच्छा या कामना। चाह का न होना और अनचाहे का हो जाना दुख का मूल कारण है। हम जन्म से ही कुछ न कुछ चाहते हैं और चाह की पूर्ति न होने पर हम दुखी होते हैं। दुख का दूसरा कारण है, हमारा शरीर जो रोगधर्मा है। शरीर के धारण करते ही रोग व पीड़ा का जन्म हो जाता है। कई बच्चे तो जन्मते ही रोग के शिकार हो जाते हैं। कई रोगों पर तो नियंत्रण हो चुका है, परंतु अभी अनेक रोग लाइलाज हैं। वृद्धावस्था में कुछ ज्यादा ही रोग उत्पन्न होते हैं। रोग से उत्पन्न पीड़ा व रोग के उपचार के खर्च से रोगी और परिजन दोनों दुखी रहते हैं।

चाह का बदला रूप है आकांक्षा। हम जीवन में ऊंचा पद, यश और कीर्ति चाहते हैं। दुनिया का ऊंचे से ऊंचा पद पाने की लालसा प्रत्येक व्यक्ति में होती है। वैज्ञानिक, साहित्यकार, चित्रकार, कलाकार, राजनीतिज्ञ, समाजसेवी आदि सब में होड़ लगी है। सफल तो एक होता है, शेष सभी दुखी होते हैं। आकांक्षा प्रगति या विकास की जननी है, परंतु दुख का मूल भी है। आकांक्षा अपने आप में बुरी नहीं है, परंतु जब यह ममत्व व संग्रह की प्रवृत्ति से जुड़ जाती है तो यह न केवल स्वयं के लिए दुख का कारण बनती है, बल्कि पूरे समाज में कलह और विषमता का कारण भी बनती है।

संग्रह की प्रवृत्ति से लोभ और कपट पैदा होता है। निजी और सामाजिक व्यवहार में व्यापार व उद्योग और सभी क्षेत्रों में प्रामाणिकता के स्थान पर जन्म होता है धोखाधड़ी, मिलावट, आपाधापी और जनविरोधी व्यवस्थाओं का। संग्रह करने वाला स्वयं तो दुखी होता ही है, दूसरे भी दुखी होते हैं। ऐसा इसलिए, क्योंकि वे ही बनते हैं धोखाधड़ी व शोषण के शिकार। आकांक्षा जन्म देती है अहं और लोभ को। अहं से पैदा होता है क्रोध और संघर्ष। विजयी बनने की आकांक्षा उचित-अनुचित की सीमा समाप्त कर देती है। संघर्ष जब हिंसात्मक हो जाता है तब मूक वर्ग (जिसमें गरीब समाज भी शामिल है) हिंसा के शिकार बनते हैं। जब तक आकांक्षा और संग्रहवृत्ति बनी है, शोषण का यह चक्रव्यूह बरकरार रहेगा।

गणि राजेंद्र विजय

पाठकनामा

pathaknama@nda .jagran.com

आरक्षण का सही आधार

फिर सिर उठाती जातिवादी राजनीति शीर्षक से लिखे अपने लेख में संजय गुप्त ने देश में जातिवादी राजनीति का पलड़ा भारी होने का जिक्र करके राजनीति और समाज को एक गहरा संदेश देने और आरक्षण का आधार आर्थिक करने का सटीक सुझाव दिया है। देश में सवर्णों का अपने हक के संरक्षण के लिए आवाज बुलंद करना काफी हद तक जायज है। तत्काल अनुसूचित जाति व जनजाति के आर्थिक, सामाजिक व शैक्षिक स्तर को सुदृढ़ करने के लिए संविधान में किए गए प्रावधानों को आज की परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित किया जाना ही देश व समाज के हित में है। आज समाज में प्रतिष्ठा का मूल कारण आर्थिक और शैक्षणिक है। अपवादों को दरकिनार करते हुए नौकरियों व शिक्षा में आरक्षण का लाभ पाकर दलितों के आर्थिक और शैक्षिक स्तर में काफी सुधार देखने को मिला है। देश में वर्षों से पिछड़े वर्ग की एक समस्या संविधान से सवाल करती है कि जब ओबीसी व्यक्ति के क्रीमी लेयर की श्रेणी में पहुंचने के बाद उसे सामान्य वर्ग में समाहित कर दिया जाता है तो फिर यह नियम अनुसूचित जाति व जनजाति पर लागू क्यों नहीं होता? आरक्षण का लाभ पाकर संपन्न वर्ग में पहुंच जाना और संपन्न वर्ग में पहुंचने के बाद भी आरक्षण का लाभ बार-बार पाना व प्रमोशन में भी आरक्षण को आधार बनाना कहां की समानता है। यह कहना निरर्थक है कि शैक्षिक व आर्थिक रूप से कमजोर लोग केवल अनुसूचित जाति और जनजाति वर्ग में ही हैं।

पिंटू सक्सेना, लखनऊ

पाक की दोहरी चाल

पाकिस्तान भारत के मामले में दोहरी नीति ना चले। एक तरफ पाक के नए प्रधानमंत्री इमरान खान कह रहे हैं कि मैं पहले दिन से ही युद्ध के विरुद्ध हूं। वहीं दूसरी तरफ वहां के सेना अध्यक्ष ने कश्मीर में चल रहे आतंकवाद का समर्थन करते हुए कहा कि वहां के युवा डटकर मुकाबला कर रहे हैं, उन्हें सलाम। 1965 और 1971 में तो पाक ने मुंह की खाई थी। वह तो भारत की मेहरबानी रही कि जीती हुई जमीन भी उसे लौटा दी। एक तरफ पाक दोस्ती का हाथ बढ़ाता है और दूसरी तरफ उसके सेना अध्यक्ष आतंकवाद को समर्थन देते हैं। पाक रहनुमा दोहरी नीति ना अपनाए और बाजवा कड़वे वचन बोलने से बाज आएं।

mahesh_nenava@yahoo.com

सराहनीय कदम

शिक्षा मंत्री, प्रकाश जावडेकर ने अपने लेख 'शिक्षा की तस्वीर बदलने की कोशिश' में तथ्य और आंकड़े देकर, शिक्षा के क्षेत्र में उपलब्धियों का जिक्र किया है। जिन दो विशेष उपलब्धियों के लिए सरकार बधाई की पात्र है, वह हैं-दसवीं कक्षा में अनिवार्य बोर्ड परीक्षा दोबारा लागू करना व आठवीं कक्षा में नो डिटेंशन पालिसी समाप्त करने के लिए बिल लाना तथा लोकसभा से पास करवा कर राज्य सभा में भेजना। ज्यादातर दसवीं पास विद्यार्थियों में वास्तविक ज्ञान लगभग शून्य के बराबर थे। केंद्र सरकार ने दोनों गलतियों को सुधारकर नेक कार्य किया हैं।

cpbansalx@gmail.com

छात्र संघ चुनाव

केंद्रीय विश्वविद्यालय में छात्रसंघ चुनाव के लिए बिगुल बजने शुरू हो चुके हैं। दिल्ली विवि, जवाहरलाल नेहरू विवि, जामिया मिलिया विवि, बनारस विवि, इलाहाबाद विवि, राजस्थान विवि आदि में छात्रसंघ चुनाव होने जा रहे हैं। विभिन्न राजनीतिक दल इसमें दिलचस्पी ले रहे हैं। सभी राजनीतिक दलों की अपनी-अपनी छात्रसंघ इकाइयां हैं, जिसके माध्यम से वे युवा वर्ग को साधने की कोशिश कर रहे हैं। राजनीति की बुराई इस चुनाव में भी घुस गई है। छात्रों में मारपीट और आरोप-प्रत्यारोप आम बात हो गई है। शिक्षा के मंदिर को इससे दूर रखना चाहिए।

विजय कुमार धानिया, नई दिल्ली

आलस्य के शिकार भारतीय

आलस के मामले में भारत अपने छोटे-बड़े पड़ोसियों जैसे पाकिस्तान, नेपाल, म्यांमार और चीन से काफी आगे है। आलसीपन में विश्व रैंकिंग में वह 52वें पायदान पर है। युद्ध की विभीषिका से लगभग तबाह हो चुका अफगानिस्तान अपने जीडीपी का देश के लोगों के स्वास्थ्य पर 8.2 प्रतिशत खर्च करता है, जबकि भारत अपने लोगों के स्वास्थ्य पर मात्र 1.25 प्रतिशत खर्च करता है। एक सर्वे के मुताबिक भारत के सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे, प्राइवेट स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों से ज्यादा स्वस्थ हैं, क्योंकि वे विटामिन और पोषक तत्वों से भरपूर खाना यथा दाल, रोटी, सब्जी, चावल, साग, दही आदि लंच में लेकर स्कूल जाते हैं। जबकि प्राइवेट स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे ज्यादातर धनाढ्य परिवारों से होते हैं। वे घर का खाना खाने के बजाए बर्गर, पिज्जा, हॉटडॉग, चाउमीन आदि लंच में लेकर जाते हैं। निजी स्कूलों के बच्चे घर से स्कूल कभी भी पैदल नहीं जाते, स्कूटर, मोटर साइकिल या कारों से जाते हैं। चूंकि ये जंक फूड, उच्च कैलोरी, वसायुक्त, बगैर विटामिन्स और फाइबर वाला खाना खाते हैं और शारीरिक श्रम नहीं करते इसलिए मोटापे का शिकार होते हैं। मोटापे की वजह से बच्चे आलसी भी हो जाते हैं। ये सारी बुराइयां गलत खानपान और गलत दिनचर्या के दुष्परिणाम स्वरूप हैं। आज युवाओं के आलसी होने का एक प्रमुख कारण प्राकृतिक और सामान्य दिनचर्या का पालन न करना भी है। युवा प्रायः देर रात तक जगते हैं और अगले दिन देर तक सोते हैं, जबकि मानव की शारीरिक रचना दिन में काम करने और रात में आराम करने की है। लोग प्रकृति द्वारा बनाए नियम के अनुसार न जीकर अपने शरीर और मस्तिष्क को विकृत बना रहे हैं और मोटापे तथा आलसीपन का शिकार हो रहे हैं।

निर्मल कुमार शर्मा, गाजियाबाद

ट्वीट-ट्वीट

अपनी नई फिल्म लिख रहा हूं आजकल। मेरा प्रयास यह रहता है कि मैंने जो कुछ भी सुना, देखा और सीखा है वह मेरी फिल्म बोले। क्योंकि जो सिनेमा दर्शक से संवाद नहीं करता वह जीवंत नहीं होता।

प्रकाश झा@prakashjha27

आइपीएल ने भारतीय बल्लेबाजों की तकनीक को बर्बाद कर दिया है। स्विंग को खेलने के लिए आपको पूरी क्रीज में जाना होता है और बॉल को अपने शरीर के नजदीक, अपनी नाक के नीचे खेलना पड़ता है। जबकि हमारे बल्लेबाज घबराहट में उसे अपने शरीर से दूर खेल कर आउट हो रहे हैं, जैसे कि बॉल कोई ग्रेनेड हो और फटने वाली हो। कोहली एक अपवाद हैं।

मिन्हाज मर्चेंट@MinhazMerchant

भारतीय सेना को अपनी संख्या में कटौती करनी चाहिए। भारत को आधुनिक हथियार और स्मार्ट आर्मी चाहिए। सेना का आकार युद्ध जीतने के लिए मायने नहीं रखता।

तुफैल अहमद@tufailelif

अपने पहले मैच में हनुमा विहारी का उम्दा प्रदर्शन देख खुशी हुई। वह दृढ़ निश्चय और आत्म विश्वास से लबरेज हैं। आने वाले दिनों में वह मध्यक्रम का भरोसेमंद चेहरा बन सकते हैं।

मोहम्मद कैफ@MohammadKaif

जनपथ

इसका भारत बंद या उसका भारत बंद,
भारतवासी सह रहे सिर्फ सियासी दंड।
सिर्फ सियासी दंड वही छलछंद पुराना,
बंद किसी का होय कष्ट जनता पे आना।
कर दे घोषित बंद मूड हो जाए जिसका,
कोई ठोस इलाज नहीं दिखता है इसका।

– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा जागरण प्रकाशन लि. के लिए डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित एवं 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित, संपादक (दिल्ली एनसीआर) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 23359961-62, नोएडा कार्यालय : 0120-3915800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No 50755/90 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त। वर्ष 29 अंक 55